COURT BOOK
EMPOWERING LEGAL CLARITY

पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936

(1936 का अधिनियम संख्यांक 3)[1]

[23 अप्रैल, 1936]

**पारसियों के विवाह और विवाह-विच्छेद से संबंधित
विधि का संशोधन करने के लिए
अधिनियम**

पारसियों के विवाह और विवाह-विच्छेद से संबंधित विधि का संशोधन करना समीचीन है; अत: इसके द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया जाता है :—

1—प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ—(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936 है ।

[2][(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय* संपूर्ण भारत पर है :]

परन्तु केन्द्रीय सरकार, [3][उन राज्यक्षेत्रों की बाबत जो 1 नवम्बर, 1956 के ठीक पूर्व भाग ख० राज्यों में समाविष्ट थे,] राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगी कि पारसी विवाह न्यायालयों के गठन तथा शक्तियों और ऐसे न्यायालयों के विनिश्चयों तथा आदेशों के विरुद्ध अपीलों से सम्बन्धित इस अधिनियम के उपबन्ध ऐसे उपान्तरों सहित लागू होंगे, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं;

[4][परन्तु यह कि इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई बात पाण्डिचेरी संघ राज्यक्षेत्रों के रिनोसाओं को लागू नहीं होगी ।]

(3) यह उस [5]तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ।

2. परिभाषाएं—इस अधिनियम में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कोई बात विरुद्ध न हो,—

(1) "मुख्य न्यायमूर्ति" के अन्तर्गत ज्येष्ठ न्यायाधीश भी है;

(2) "न्यायालय" से इस अधिनियम के अधीन गठित न्यायालय अभिप्रेत है;

(3) "अभित्याग करना" से उसके व्याकरणिक रूपभेदों तथा सजातीय पदों सहित, विवाह के दूसरे पक्षकार का, समुचित कारण बिना और ऐसे पक्षकार की सहमति बिना या इच्छा के विरुद्ध अभित्याग करना अभिप्रेत है;

(4) "घोर उपहति" से निम्नलिखित अभिप्रेत है—

(क) पुंस्त्वहरण;

(ख) दोनों में से किसी भी नेत्र की दृष्टि का स्थायी क्षय;

(ग) दोनों में से किसी भी कान की श्रवण शक्ति का स्थायी क्षय;

(घ) किसी भी अंग या जोड़ का विच्छेद;

(ङ) किसी भी अंग या जोड़ की शक्तियों का नाश या स्थायी ह्रास;

(च) सिर या चेहरे का स्थायी विद्रूपीकरण; या

(छ) कोई भी उपहति, जो जीवन को संकटापन्न बनाती है;

(5) "पति" से पारसी पति अभिप्रेत है;

---

[1] इस अधिनियम का निम्नलिखित पर विस्तार किया गया :—

(क) बरार विधि अधिनियम, 1941 (1941 का 4) द्वारा बरार पर;

(ख) 1963 के विनियम सं० 6 की धारा 2 और पहली अनुसूची द्वारा (1-7-1965 से) दादरा और हवेली पर ।

[2] 1951 के अधिनियम सं० 3 की धारा 3 तथा अनुसूची द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

* इस अधिनियम को जम्मू-कश्मीर संघ राज्यक्षेत्र और लद्दाख संघ राज्यक्षेत्र में अधिसूचना सं. सा. का. 3912(अ), तारीख, 30 अक्टूबर, 2019 से लागू किया गया ।

[3] विधि अनुकूलन (सं० 3) आदेश, 1956 द्वारा "भाग ख राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1968 के अधिनियम सं० 26 की धारा 3 और अनुसूची 1 द्वारा अन्त:स्थापित ।

[5] 22 जून, 1936, देखिए भारत का राजपत्र, 1936, भाग 1, पृष्ठ 621 ।

COURT BOOK

(6) "विवाह" से पारसियों के बीच विवाह अभिप्रेत है, चाहे वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के पहले किया गया हो या बाद में;

(7) "पारसी" से जरथुस्त्र पारसी अभिप्रेत है;

(8) "पुरोहित" से पारसी पुरोहित अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत "दस्तूर" तथा "मोबिद" भी है; और

(9) "पत्नी" से पारसी पत्नी अभिप्रेत है ।

2—पारसियों के बीच विवाह

3. पारसी विवाहों की विधिमान्यता के बारे में अपेक्षाएं—[1][(1)] कोई भी विवाह विधामान्य नहीं होगा, यदि—

(क) विवाह करने वाले पक्षकार प्रथम अनुसूची में दी गई रक्त सम्बन्ध की या विवाह सम्बन्ध की कोटियों में से किसी में एक दूसरे के नातेदार हैं; या

(ख) ऐसा विवाह "आशीर्वाद" कहे जाने वाले पारसी कर्मकांड की रीति के अनुसार, किसी पुरोहित द्वारा, ऐसे पुरोहित से भिन्न दो पारसी साक्षियों की उपस्थिति में अनुष्ठापित नहीं किया गया है; या

[2][(ग) किसी ऐसे पारसी की दशा में (चाहे ऐसे पारसी ने अपना धर्म या अधिवास बदला हो या नहीं) जिसने, यदि वह पुरुष है तो, इक्कीस वर्ष की आयु पूरी नहीं की है, और यदि वह महिला है तो, अट्ठारह वर्ष की आयु पूरी नहीं की है ।]

[3][(2) इस बात के होते हुए भी कि विवाह उपधारा (1) के उपबंधों में से किसी के अधीन अविधिमान्य है, ऐसे विवाह की ऐसी कोई संतान, धर्मज होगी जो, तब धर्मज होती यदि विवाह विधिमान्य होता ।]

4. पुनर्विवाह कब विधिविरुद्ध होगा—(1) कोई भी पारसी (चाहे ऐसे पारसी ने अपना धर्म या अधिवास बदला हो या नहीं) अपने पति या अपनी पत्नी के जीवनकाल में चाहे वह पारसी हो या नहीं, इस अधिनियम या किसी अन्य विधि के अधीन विवाह तब तक नहीं करेगा जब तक कि उसने अपनी पत्नी या अपने पति से विधिपूर्ण विवाह-विच्छेद प्राप्त नहीं किया है या ऐसी पत्नी के साथ या ऐसे पति के साथ उसका विवाह विधिपूर्ण रीति से अकृत और शून्य घोषित नहीं किया गया है या विघटित नहीं किया गया है और यदि ऐसी पत्नी या ऐसे पति के साथ [4][पारसी मैरिज एण्ड डाइवोर्स ऐक्ट, 1865 (1865 का 15)] या इस अधिनियम के अधीन विवाह किया गया था, तो इन दोनों अधिनियमों में से किसी एक के अधीन पूर्वोक्त विवाह-विच्छेद, घोषणा या विघटन नहीं हो गया है ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों के प्रतिकूल किया गया प्रत्येक विवाह शून्य होगा ।

5. द्विविवाह के लिए दण्ड—प्रत्येक पारसी जो अपनी पत्नी या अपने पति के जीवन-काल में, चाहे वह पारसी हो या नहीं, ऐसी पत्नी या ऐसे पति से, विधिपूर्ण विवाह-विच्छेद प्राप्त किए बिना या ऐसी पत्नी या ऐसे पति से उसका विवाह विधिपूर्ण रीति से अकृत और शून्य घोषित हुए बिना या विघटित हुए बिना, विवाह करेगा, तो वह ऐसे पति या ऐसी पत्नी के जीवन-काल के दौरान पुनर्विवाह करने के अपराध के लिए भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45) की धारा 494 तथा 495 में उपबन्धित शास्तियों से दण्डनीय होगा ।

6. विवाह का प्रमाणपत्र तथा रजिस्ट्रीकरण—इस अधिनियम के अधीन किए गए प्रत्येक विवाह का अनुष्ठापन होने पर विवाह कराने वाले पुरोहित द्वारा अनुसूची 2 में अन्तर्विष्ट प्ररूप में तुरन्त प्रमाणित किया जाएगा । प्रमाणपत्र पर उक्त पुरोहित, विवाह के पक्षकारों या [5]*** द्वारा, और विवाह में उपस्थित दो साक्षियों द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे और उक्त पुरोहित तब दो रुपए की फीस सहित, जो पति द्वारा संदत्त की जाएगी, ऐसा प्रमाणपत्र उस स्थान के रजिस्ट्रार को भेजेगा, जहां ऐसा विवाह अनुष्ठापित किया गया है । रजिस्ट्रार, प्रमाणपत्र और फीस की प्राप्ति पर उस प्रयोजन के लिए अपने द्वारा रखे जाने वाले रजिस्टर में प्रमाणपत्र दर्ज करेगा और फीस रखने का हकदार होगा ।

7. रजिस्ट्रार की नियुक्ति—इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए एक रजिस्ट्रार नियुक्त किया जाएगा । किसी उच्च न्यायालय की मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर, रजिस्ट्रार ऐसे न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा और ऐसी सीमाओं के बारह राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा । इस प्रकार नियुक्त किए गए प्रत्येक रजिस्ट्रार को उस मुख्य न्यायमूर्ति या राज्य सरकार द्वारा हटाया जा सकेगा जिसने उसे नियुक्त किया है ।

8. विवाह-रजिस्टर का लोक निरीक्षण के लिए खुला होना—धारा 6 में उल्लिखित विवाह-रजिस्टर सभी समुचित समयों पर निरीक्षण के लिए खुला रहेगा और आवेदन किए जाने पर रजिस्ट्रार द्वारा उससे प्रमाणित उद्धरण, ऐसे प्रत्येक उद्धरण के लिए आवेदक द्वारा दो रुपए का संदाय किए जाने पर, दिए जाएंगे । प्रत्येक ऐसा रजिस्टर उसमें अन्तर्विष्ट विवरणों के सत्य होने का साक्ष्य होगा ।

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा (15-4-1988 से) धारा 3 को उसकी उपधारा (1) के रूप में पुन:संख्यांकित ।

[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा (15-4-1988 से) खण्ड (ग) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 2 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

[4] 1936 के अधिनियम सं० 3 की धारा 53 द्वारा निरसित ।

[5] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 3 द्वारा (15-4-1988 से) कतिपय शब्दों का लोप किया गया ।

COURT BOOK

9. प्रमाणपत्र की प्रति का जन्म, मुत्यु तथा विवाह के महारजिस्ट्रार को भेजा जाना—मुम्बई में उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नियुक्त रजिस्ट्रार से भिन्न, प्रत्येक रजिस्ट्रार, ऐसे अन्तरालों पर जैसे कि वह राज्य सरकार, जिसके द्वारा उसे नियुक्त किया गया था, समय-समय पर निदेश दे, ऐसी राज्य सरकार द्वारा प्रशासित राज्यक्षेत्रों के लिए जन्म, मृत्यु तथा विवाह के महारजिस्ट्रार को, ऐसे अन्तरालों में से अंतिम अंतराल से उक्त विवाह के रजिस्टर में अपने द्वारा दर्ज सभी प्रमाणपत्रों की सही प्रमाणित प्रति, ऐसे प्ररूप में, जैसा कि राज्य सरकार समय-समय पर विहित करे, भेजेगा ।

10. विवाह-विच्छेदों का रजिस्ट्रीकरण—जब कोई न्यायालय विवाह-विच्छेद, अकृतता या विघटन के लिए डिक्री पारित करता है, तब वह न्यायालय अपनी अधिकारिता के भीतर धारा 7 के अधीन नियुक्त विवाह के रजिस्ट्रार को रजिस्ट्रीकरण के लिए डिक्री की प्रति भेजेगा; रजिस्ट्रार उसे उस रजिस्टर में जिसे अपने उस प्रयोजन के लिए रखा है, दर्ज करेगा और विवाह के रजिस्ट्रारों और रजिस्टरों को लागू भाग 2 के उपबंध जहां तक हो सके विवाह-विच्छेद के और अकृतता तथा विघटन की डिक्रियों के रजिस्ट्रारों और रजिस्टरों को लागू होंगे ।

11. धारा 4 के प्रतिकूल विवाह का अनुष्ठापन कराने के लिए शास्ति—धारा 4 के प्रतिकूल तथा उसके उल्लंघन में किसी विवाह के बारे में जानते हुए और जानबूझकर अनुष्ठापन करने वाले प्रत्येक पुरोहित को उसके लिए दोषसिद्धि पर, सादा करावास से, जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो दो सौ रुपए तक का हो सकेगा या दोनों से दंडित किया जाएगा ।

12. पुरोहित द्वारा धारा 6 की अपेक्षाओं की उपेक्षा के लिए शास्ति—धारा 6 में अंतर्विष्ट अपने से सम्बन्धित अपेक्षाओं में से किसी का अनुपालन करने की उपेक्षा करने वाले पुरोहित को उसके लिए दोषसिद्धि पर, प्रत्येक ऐसे अपराध के लिए सादा करावास से, जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो एक सौ रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, दण्डित किया जाएगा ।

13. प्रमाणपत्र पर हस्ताक्षर न करने तथा उसे अनुप्रमाणित न करने के लिए शास्ति—धारा 6 द्वारा उक्त प्रमाणपत्र पर हस्ताक्षर करने या उसे अनुप्रमाणित करने के लिए अपेक्षित प्रत्येक ऐसे अन्य व्यक्ति को, जो जानबूझकर लोप करेगा या उसकी उपेक्षा करेगा, उसके लिए दोषसिद्धि पर प्रत्येक ऐसे अपराध के लिए जुर्माने से जो एक सौ रुपए से अधिक नहीं होगा, दण्डित किया जाएगा ।

14. मिथ्या प्रमाणपत्र बनाने आदि के लिए शास्ति—कोई ऐसा प्रमाणपत्र, जिसमें ऐसा कथन है जो मिथ्या है और जिसके मिथ्या होने का या तो उसे ज्ञान है या विश्वास है, बनाने वाला या उस पर हस्ताक्षर करने वाला या उसका अनुप्रमाणन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को, सादा कारावास से, जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो एक सौ रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडित किया जाएगा और यदि ऐसा कार्य भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) में परिभाषित कूटरचना की कोटि में आता है, तो ऐसा व्यक्ति उसके लिए दोषसिद्धि पर उस संहिता की धारा 466 में उपबंधित शास्तियों के लिए भी दायी होगा ।

15. प्रमाणपत्र को रजिस्टर करने में असफल रहने पर शास्ति—धारा 6 के अनुसरण में उक्त प्रमाणपत्र को दर्ज न करने वाले रजिस्ट्रार को, सादा कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या ऐसे जुर्माने से, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडित किया जाएगा ।

16. रजिस्टर को छिपाकर रखने, नष्ट करने या उसमें परिवर्तन करने के लिए शास्ति—उक्त रजिस्टर के किसी भाग को छिपाकर रखने वाले, नष्ट करने वाले या उसमें बेईमानी से या कपटपूर्ण रीति से परिवर्तन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को, भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45) में परिभाषित दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा अथवा यदि वह रजिस्ट्रार है, तो कारावास की अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी तथा वह ऐसे जुर्माने का भी दायी होगा जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा ।

17. प्ररूपिक अनियमितता के कारण विवाह का अविधिमान्य होना—इस अधिनियम के अधीन किया गया कोई विवाह केवल इस तथ्य के आधार पर अविधिमान्य नहीं समझा जाएगा कि वह धारा 6 के अधीन प्रमाणित नहीं किया गया था अथवा प्रमाणपत्र रजिस्ट्रार को नहीं भेजा गया था अथवा प्रमाणपत्र दोषपूर्ण, अनियमित अथवा गलत था ।

3—पारसी विवाह न्यायालय

18. अधिनियम के अधीन विशेष न्यायालयों का गठन—इस अधिनियम के अधीन वादों की सुनवाई के लिए कलकत्ता, मद्रास और मुम्बई के प्रेसिडेन्सी नगरों में से प्रत्येक में तथा विभिन्न राज्य सरकारों के राज्यक्षेत्रों के ऐसे अन्य स्थानों में, जिसे ऐसी सरकारें क्रमश: उचित समझे, एक विशेष न्यायालय गठित किया जाएगा ।

19. पारसी प्रधान विवाह न्यायालय—प्रेसिन्डेसी नगरों में से प्रत्येक में इस प्रकार गठित न्यायालय का नाम, यथास्थिति, कलकत्ता, मद्रास या मुम्बई का पारसी प्रधान विवाह न्यायालय होगा । पारसी प्रधान विवाह न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं वही होंगी जो उच्च न्यायालय की मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं हैं । उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति या उसी न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश जिसे मुख्य न्यायमूर्ति समय-समय पर नियुक्त करे, ऐसे विवाह न्यायालय का न्यायाधीश होगा और इस अधिनियम के अधीन मामलों के विचारण में [1][पांच डेलीगेट, निम्नलिखित मामलों में के सिवाय, उसकी सहायता करेंगे,—

(क) अंतवर्ती आवेदन और कार्यवाहियां;

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 4 द्वारा (15-4-1988 से) "सात डेलीगेट उसकी सहायता करेंगे" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

COURT BOOK
EMPOWERING LEGAL CLARITY

(ख) निर्वाह-व्यय और भरण-पोषण, स्थायी और वाद-कालीन, दोनों;

(ग) संतान की अभिरक्षा, भरणपोषण और शिक्षा; और

(घ) मामलों की नियमित सुनवाई से भिन्न सभी मामले और कार्यवाहियां ।]

20. पारसी जिला विवाह-न्यायालय—प्रेसिडेन्सी नगर से भिन्न, किसी स्थान पर इस प्रकार प्रत्येक न्यायालय का नाम ऐसे स्थान का पारसी जिला विवाह न्यायालय होगा । धारा 21 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के अधीन रहते हुए, ऐसे न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाएं वही होंगी जो उस जिले की हैं जिसमें वह न्यायालय कार्य करता है । ऐसे स्थान के आरम्भिक सिविल अधिकारिता वाले प्रधान न्यायालय का न्यायाधीश ऐसे विवाह न्यायालय का न्यायाधीश होगा और इस अधिनियम के अधीन के मामलों के विचारण में [1][पांच डेलीगेट, निम्नलिखित मामलों में के सिवाय, उसकी सहायता करेंगे,—

(क) अंतर्वर्ती आवेदन और कार्यवाहियां;

(ख) निर्वाह-व्यय और भरण-पोषण, स्थायी और वाद-कालीन, दोनों;

(ग) संतान की अभिरक्षा, भरणपोषण और शिक्षा; और

(घ) मामलों की नियमित सुनवाई से भिन्न सभी मामले और कार्यवाहियां ।]

21. जिला न्यायालयों की क्षेत्रीय अधिकारिता में परिवर्तन करने की शक्ति—राज्य सरकार, समय-समय पर किसी पारसी जिला विवाह न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं में परिवर्तन कर सकेगी तथा ऐसी सीमाओं में अपने प्रशासन के अधीन अनेक जिलों को सम्मिलित कर सकेगी ।

22. प्रधान विवाह न्यायालय की अधिकारिता के भीतर कुछ जिलों का होना—किसी ऐसे जिले को जिसे सरकार पारसी निवासियों के अल्प संख्या में होने के कारण जिला विवाह न्यायालय की अधिकारिता में सम्मिलित करना असमीचीन समझती है, ऐसी राज्य सरकार के उन राज्यक्षेत्रों के पारसी प्रधान विवाह न्यायालय की अधिकारिता के भीतर सम्मिलित किया जाएगा । जहां कोई ऐसा न्यायालय हो ।

23. न्यायालय मुद्रा—इस अधिनियम के अधीन गठित प्रत्येक न्यायालय के लिए एक मुद्रा बनाई जाएगी और ऐसी न्यायालय की सभी डिक्रियां और आदेश तथा डिक्रियों और आदेशों की प्रतियां उस मुद्रा से मुद्रांकित की जाएंगी यह मुद्रा पीठासीन न्यायाधीश की अभिरक्षा में रखी जाएगी ।

24. डेलीगेट की नियुक्ति—(1) राज्य सरकारें अपने-अपने शासनों के अधीन प्रेसिडेंसी नगरों और जिलों में डेलीगेट, ऐसी रीति से जो संबंधित राज्य सरकारें ठीक समझें, स्थानीय पारसियों को अपनी राय अभिव्यक्त करने का अवसर देने के पश्चात् इस अधिनियम के अधीन उद्भूत मामलों के न्यायनिर्णयन में सहायता करने के लिए डेलीगेट के रूप में व्यक्तियों की नियुक्ति करेंगी ।

(2) इस प्रकार नियुक्त व्यक्ति पारसी होंगे, उनके नाम राजपत्र में प्रकाशित किए जाएंगे और किसी उच्च न्यायालय की मामूली आरम्भिक सिविल अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर उनकी संख्या तीस से अधिक नहीं होगी और ऐसी सीमाओं के बाहर के जिलों में बीस से अधिक नहीं होगी ।

25. नए डेलीगेट की नियुक्ति करने की श०क्ति—डेलीगेट की नियुक्ति दस वर्ष के लिए होगी, किन्तु वह उतनी ही अवधि या अवधियों के लिए पुन:नियुक्त किए जाने का पात्र होगा । जब कभी किसी डेलीगेट की मृत्यु हो जाए, या वह अपनी पदावधि समाप्त कर ले या वह अपना पदत्याग करना चाहे या वह इंकार कर दे या कार्य करने में असमर्थ हो जाए या पारसी नहीं रह जाए या भारतीय दण्ड संहिता (1860 का 45) या उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन किसी अपराध के लिए [2][जिसमें नैतिक अधमता अंतर्वलित है] सिद्धदोष ठहराया जाए या दिवालिया घोषित कर दिया जाए, तब और उतनी बार राज्य सरकार किसी व्यक्ति को उसके स्थान पर डेलीगेट नियुक्त कर सकेगी और इस प्रकार नियुक्त किए गए व्यक्ति का नाम राजपत्र में प्रकाशित किया जाएगा ।

26. डेलीगेटों को लोक सेवक समझा जाना—इस अधिनियम के अधीन नियुक्त सभी डेलीगेट भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अर्थ में लोक सेवक समझे जाएंगे ।

27. धारा 19 तथा धारा 20 के अधीन डेलीगेटों का चयन धारा 24 के अधीन नियुक्त डेलीगेटों में से किया जाएगा—इस अधिनियम के अधीन वादों के न्यायनिर्णयन में सहायता करने के लिए धारा 19 तथा धारा 20 के अधीन चयन किए गए डेलीगेट, राज्य सरकार द्वारा धारा 24 के अधीन नियुक्त डेलीगेटों में से सम्यक् चक्रानुक्रम में न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश के आदेशों के अधीन लिए जाएंगे :

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 4 द्वारा (15-4-1988 से) "सात डेलीगेट उसकी सहायता करेंगे" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 5 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

COURT BOOK

परन्तु वाद का प्रत्येक पक्षकार ऐसे डेलीगेटों का चयन किए जाने के पूर्व न्यायालय में उपस्थित डेलीगेटों में से किन्हीं [1][दो] के विरुद्ध, कारण दिए बिना, आक्षेप कर सकेगा और ऐसे किसी भी डेलीगेट का जिसके विरुद्ध इस प्रकार आक्षेप किया गया है चयन नहीं किया जाएगा ।

28. विवाह न्यायालयों में विधि व्यवसायी—किसी उच्च न्यायालय में विधि व्यवसाय करने के हकदार सभी विधि व्यवसायी, इस अधिनियम के अधीन गठित किसी भी न्यायालय में विधि व्यवसाय करने के हकदार होंगे और किसी जिला न्यायालय में विधि व्यवसाय करने के हकदार सभी विधि व्यवसायी इसी अधिनियम के अधीन गठित किसी भी जिला पारसी विवाह न्यायालय में विधि व्यवसाय करने के हकदार होंगे ।

29. न्यायालय, जिसमें वाद लाए जाएंगे—(1) इस अधिनियम के अधीन संस्थित सभी वाद उस न्यायालय में लाए जाएंगे जिसकी अधिकारिता की सीमाओं के भीतर वाद संस्थित किए जाने के समय प्रतिवादी निवास करता है [2][या जहां विवाद इस अधिनियम के अधीन अनुष्ठापित किया गया था ।]

(2) जब प्रतिवादी [3][ऐसे राज्यक्षेत्रों को, जिस पर इस अधिनियम का विस्तार है] छोड़ देता है, तब ऐसा वाद उस स्थान के न्यायालय में लाया जाएगा जहां वादी तथा प्रतिवादी अन्तिम बार एक साथ रहे हों ।

(3) किसी भी दशा में, चाहे प्रतिवादी [2][ऐसे राज्यक्षेत्रों में जिस पर इस अधिनियम का विस्तार है,] निवास करता है अथवा नहीं, यदि ऐसे न्यायालय ने कारणों को लेखबद्ध करते हुए ऐसा करने के लिए इजाजत दे दी है तो ऐसा वाद ऐसे स्थान के न्यायालय में लाया जा सकेगा जहां वादी निवास करता है या ऐसे स्थान के न्यायालय में लाया जा सकेगा जहां वादी और प्रतिवादी दोनों अन्तिम बार एक साथ रहे हों ।

4—विवाह संबंधी वाद

30. अकृतता के लिए वाद—जब किसी मामले में विवाहोत्तर सम्भोग प्राकृतिक कारणवश असंभव हो तब ऐसा विवाह उसके किसी पक्षकार की प्रेरणा पर अकृत तथा शून्य घोषित किया जा सकेगा ।

31. विघटन के लिए वाद—यदि कोई पति या पत्नी सात वर्ष तक अपनी पत्नी या अपने पति से लगातार दूर रहा हो या रही हो और उसके जीवित रहने के बारे में उन व्यक्तियों ने उस समय के भीतर, कुछ नहीं सुना जिन्होंने उसके बारे में, यदि वह पुरुष या स्त्री जीवित होता या होती तो स्वाभाविकत: सुना होता, तो ऐसे पति या ऐसी पत्नी का विवाह उसके किसी पक्षकार की प्रेरणा पर विघटित किया जा सकेगा ।

32. विवाह-विच्छेद के आधार—कोई भी विवाहित व्यक्ति निम्नलिखित आधारों में से किसी एक या अधिक पर विवाह-विच्छेद के लिए वाद ला सकेगा, अर्थात् :—

(क) विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् प्रतिवादी द्वारा जानबूझकर विवाहोत्तर संभोग करने से इंकार करने के कारण एक वर्ष के भीतर विवाहोत्तर संभोग नहीं हो पाया है;

(ख) प्रतिवादी विवाह के समय विकृतचित्त था और वाद की तारीख तक प्राय: ऐसा ही रहा है;

परन्तु इस आधार पर विवाह-विच्छेद तभी किया जाएगा जबकि—

(1) वादी, विवाह के समय उस तथ्य के बारे में अनभिज्ञ था, और

(2) वादी ने विवाह की तारीख से तीन वर्ष के भीतर वाद फाइल कर दिया है;

[4][(खख) प्रतिवादी वाद फाइल किए जाने के, ठीक पूर्व दो वर्ष या उससे अधिक की अवधि से असाध्य रूप से विकृतचित्त रहा है अथवा निरंतर या आंतरायिक रूप से इस प्रकार के और इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि वादी से युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रतिवादी के साथ रहे ।

स्पष्टीकरण—इस खंड में,—

(क) "मानसिक विकार" पद से मानसिक बीमारी, मस्तिष्क का संरोध या अपूर्ण विकास, मनोविकृति या मस्तिष्क का कोई अन्य विकार या नि:शक्तता अभिप्रेत है और उसके अंतर्गत विखंडित मनस्कता भी है;

(ख) "मनोविकृति" पद से मस्तिष्क या दीर्घ-स्थायी विकार या नि:शक्तता (चाहे इसमें बुद्धि की अवसामान्यता हो या नहीं) अभिप्रेत है, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिवादी का आचरण सामान्य रूप से आक्रामक या गंभीर रूप से अनुत्तरदायी हो जाता है, और चाहे उसके लिए चिकित्सीय उपचार अपेक्षित हो या नहीं अथवा ऐसा उपचार किया जा सकता हो या नहीं;]

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 6 द्वारा (15-4-1988 से) "तीन" शब्द के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 7 द्वारा (15-4-1988 से) जोड़ा गया ।

[3] 1951 के अधिनियम सं० 3 की धारा 3 तथा अनुसूची द्वारा "भाग क राज्यों और भाग ग राज्यों" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 8 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

COURT BOOK
EMPOWERING LEGAL CLARITY

(ग) प्रतिवादी विवाह के समय वादी से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा गर्भवती थी :

परन्तु इस आधार पर विवाह-विच्छेद तभी किया जाएगा, जब कि (1) वादी विवाह के समय अभिकथित तथ्य के बारे में अनभिज्ञ था, (2) वाद-विवाद की तारीख से दो वर्ष के भीतर फाइल कर दिया गया है, और (3) वादी को उस तथ्य की जानकारी हो जाने के पश्चात् वैवाहिक संभोग नहीं किया गया है;

(घ) प्रतिवादी ने विवाह के पश्चात् जारकर्म या व्यभिचार या द्विविवाह या बलात्संग या कोई अप्राकृतिक अपराध किया है :

परन्तु वाद वादी को उस तथ्य की जानकारी होने के दो वर्ष के पश्चात् फाइल किया गया है तो इस आधार पर विवाह-विच्छेद नहीं किया जाएगा;

[1][(घघ) यह कि प्रतिवादी ने विवाह के अनुष्ठापन के समय से ही वादी के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है या इस रूप में आचरण किया है जिससे वादी को प्रतिवादी के साथ रहने के लिए बाध्य करना न्यायालय की राय में अनुचित होगा :

परन्तु इस आधार पर विवाह-विच्छेद के प्रत्येक वाद के न्यायालय को यह विवेकाधिकार होगा कि वह डिक्री विवाह-विच्छेद के लिए मंजूर करे या केवल न्यायिक-पृथक्करण के लिए;]

(ङ) प्रतिवादी ने विवाह के पश्चात् वादी की स्वेच्छया घोर उपहति की है, या उसने वादी को रतिज रोग संक्रांत किया है या जहां प्रतिवादी पति है, वहां उसने पत्नी को वेश्यावृत्ति के लिए विवश किया है :

परन्तु इस आधार पर विवाह-विच्छेद नहीं किया जाएगा यदि वाद—

(i) घोर उपहति करने के, या

(ii) वादी को संक्रामण की जानकारी होने के, या

(iii) वेश्यावृत्ति के लिए अंतिम बार विवश किए जाने के,

दो वर्ष के पश्चात् फाइल किया जाता है;

(च) प्रतिवादी भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) में परिभाषित किसी अपराध के लिए सात वर्ष या उससे अधिक के लिए कारावास का दण्ड भोग रहा है :

परन्तु इस आधार पर विवाह-विच्छेद तभी किया जाएगा जब प्रतिवादी वाद फाइल करने के पूर्व उक्त अवधि में से कम से कम एक वर्ष का कारावास भोग चुका हो;

(छ) प्रतिवादी ने कम से कम [2][दो वर्ष] के लिए वादी का अभित्यजन किया है;

(ज) [3]*** प्रतिवादी के विरुद्ध वादी को पृथक् भरण-पोषण के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा आदेश पारित किया जा चुका है, और पक्षकारों ने ऐसी डिक्री या आदेश से [2][एक वर्ष] या उससे अधिक तक वैवाहिक संभोग नहीं किया है;

[4]* * * * * *

(ञ) प्रतिवादी [5][किसी अन्य धर्म में संपरिवर्तन के कारण] पारसी नहीं रह गया है :

परन्तु यदि वाद वादी को उस तथ्य की जानकारी होने के दो वर्ष के पश्चात् फाइल किया गया है तो इस आधार पर विवाह-विच्छेद नहीं किया जाएगा ।

[6][**32क. किसी डिक्री के अनुसरण में एक वर्ष के भीतर सहवास या दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन का पुनरारंभ न करना विवाह-अनुच्छेद का आधार होगा**—(1) किसी विवाह का चाहे वह पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 5) के प्रारम्भ के पूर्व या पश्चात् अनुष्ठापित हुआ है कोई पक्षकार विवाह-विच्छेद के लिए इस आधार पर भी वाद ला सकेगा,—

(i) कि ऐसी कार्यवाही में पारित जिसमें उस विवाह के पक्षकार, पक्षकार थे, न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के पारण के पश्चात्, एक वर्ष या उससे ऊपर की कालावधि भर उन पक्षकारों के बीच सहवास का कोई पुनरारंभ नहीं हुआ है; या

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 8 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।
[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 8 द्वारा (15-4-1988 से) "तीन वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
[3] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 8 द्वारा (15-4-1988 से) कतिपय शब्दों का लोप किया गया ।
[4] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 8 द्वारा (15-4-1988 से) खण्ड (झ) का लोप किया गया ।
[5] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 4 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।
[6] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 9 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

COURT BOOK

(ii) कि ऐसी कार्यवाही में पारित जिसमें उस विवाह के पक्षकार, पक्षकार थे, दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के पारण के पश्चात्, एक वर्ष या उससे अधिक की कालावधि भर उन पक्षकारों के बीच दांपत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन नहीं हुआ है ।

(2) विवाह-विच्छेद के लिए कोई डिक्री उपधारा (1) के अधीन मंजूर नहीं की जाएगी यदि वादी इस अधिनियम की धारा 40 या दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) की धारा 488 या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 125 के अधीन उसके विरुद्ध पारित भरण-पोषण के किसी आदेश का अनुपालन करने में असफल रहा है या इसकी उपेक्षा की है ।

32ख. पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद—(1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए यह है कि विवाह के दोनों पक्षकार मिलकर विवाह-विच्छेद के लिए वाद, चाहे ऐसा विवाह पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 5) के प्रारंभ के पूर्व या उसके पश्चात् अनुष्ठापित किया गया हो, इस आधार पर फाइल कर सकेंगे कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं, और यह कि वे एक साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गए हैं कि विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए :

परन्तु इस उपधारा के अधीन कोई वाद तब तक फाइल नहीं किया जाएगा जब तक कि वाद फाइल किए जाने की तारीख को विवाह की तारीख से एक वर्ष व्यतीत न हो गया हो ।

(2) न्यायालय, पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात् और ऐसी जांच, जो वह ठीक समझे, करने के पश्चात् अपना यह समाधान कर लेने पर कि विवाह इस अधिनियम के अधीन अनुष्ठापित हुआ है और वाद में किए गए प्रकथन सही हैं और यह कि वाद के दोनों में से किसी पक्षकार की सम्मति कपट या बल द्वारा अभिप्राप्त नहीं की गई थी, यह घोषणा करते हुए डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा ।]

33. सह-प्रतिवादी का संयोजन—जारकर्म के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए प्रत्येक वाद में, जब तक न्यायालय ने अन्यथा आदेशन किया हो, वादी उस व्यक्ति को, जिसके साथ जारकर्म किया जाना अभिकथित है, सह-प्रतिवादी बनाएगा और पति द्वारा किसी ऐसे वाद में न्यायालय की कार्यवाही के संपूर्ण खर्चे या उसके किसी भाग का संदाय करने के लिए जारकर्म करने वाले व्यक्ति को आदेश दे सकेगा ।

34. न्यायिक पृथक्करण के लिए वाद—कोई भी विवाहित व्यक्ति, किसी ऐसे आधार पर, जिसके लिए ऐसा व्यक्ति विवाद-विच्छेद के लिए वाद फाइल कर सकता है [1]*** न्यायिक पृथक्करण के लिए वाद ला सकेगा ।

35. कुछ वादों में डिक्रियां—धारा 30, धारा 31, धारा 32 [2][32क] या धारा 34 के अधीन किसी वाद में, चाहे उसमें प्रतिवाद किया गया हो या नहीं, यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अनुतोष मंजूर किए जाने के लिए उन धाराओं में दिए गए आधारों में से कोई आधार विद्यमान है और अनुतोष न देने के लिए उसमें दिए गए आधारों में से कोई भी आधार विद्यमान नहीं है और—

(क) वादपत्र में दिए गए कार्य या लोप का उपमर्षण नहीं किया गया है;

(ख) पति और पत्नी मिलकर दुस्संधि से कार्य नहीं कर रहे हैं;

(ग) वादी ने उक्त कार्य या लोप का मौनानुकूलन नहीं किया है और वह उसमें सहायक नहीं है;

(घ) (उस दशा के सिवाय जिसमें इस अधिनियम द्वारा परिसीमाकाल की निश्चित कालावधि रखी गई है) वाद संस्थित करने में कोई भी अनावश्यक या अनुचित विलम्ब नहीं हुआ है; और

(ङ) अनुतोष मंजूर न करने का कोई अन्य वैध आधार नहीं है,

तब और ऐसी दशा में ही न्यायालय तदनुसार ऐसे अनुतोष के लिए डिक्री देगा, अन्यथा नहीं ।

36. दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद—जहां पति ने पत्नी का अभित्यजन कर दिया है या विधिपूर्ण कारण के बिना उसके साथ सहवास समाप्त कर दिया है, या जहां पत्नी ने अपने पति का अभित्यजन कर दिया है या विधिपूर्ण कारण के बिना उसके साथ सहवास समाप्त कर दिया है, वहां वह पक्षकार जिसे इस प्रकार अभित्यक्त किया गया है या जिसके साथ इस प्रकार सहवास समाप्त कर दिया गया है अपने दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद ला सकेगा और यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि वादपत्र में अन्तर्विष्ट अभिकथन सत्य है और अनुतोष मंजूर न करने का कोई न्यायसंगत आधार नहीं है, तो वह तदनुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री देने के लिए कार्यवाही कर सकेगा ।

37. प्रतिवादी द्वारा किसी अनुतोष के लिए प्रतीप-दावा—इस अधिनियम के अधीन किसी वाद में, प्रतिवादी ऐसे किसी अनुतोष के लिए प्रतीप-दावा कर सकेगा जिसके लिए वह इस अधिनियम के अधीन हकदार है ।

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 10 द्वारा (15-4-1988 से) कतिपय शब्दों का लोप किया गया ।

[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 11 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

COURT BOOK

[1][**38. दस्तावेजी साक्ष्य**—तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के अधीन किसी वाद के विचारण में किसी कार्यवाही में कोई दस्तावेज इस आधार पर साक्ष्य में अग्राह्य नहीं होगी कि वह सम्यक् रूप से स्टांपित या रजिस्ट्रीकृत नहीं है ।]

[2][**39. वादकालीन निर्वाहिका**—जहां कि इस अधिनियम के अधीन किसी वाद में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि, यथास्थिति, पत्नी या पति को उसके संभाल के लिए और वाद के आवश्यक खर्चे के लिए पर्याप्त स्वंतत्र आय नहीं है वहां वह पत्नी या पति के आवेदन पर प्रतिवादी को यह आदेश दे सकेगा कि वादी को वाद में होने वाले व्यय तथा वाद के दौरान में प्रति सप्ताह या प्रतिमास ऐसी राशि संदत्त करे जो वादी की अपनी आय और प्रतिवादी की आय को देखते हुए न्यायालय को युक्तियुक्त प्रतीत हो :

[3][परन्तु वाद के व्ययों और वाद के दौरान ऐसी साप्ताहिक या मासिक राशि के संदाय के लिए आवेदन को, यथासम्भव, यथास्थिति, पत्नी या पति पर सूचना की तामील की तारीख से, साठ दिन के भीतर निपटया जाएगा ।]

40. स्थायी निर्वाह व्यय और भरण-पोषण—(1) इस अधिनियम के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करने वाला कोई भी न्यायालय, डिक्री पारित करते समय या उसके पश्चात् किसी भी समय, पत्नी या पति द्वारा उस प्रयोजन के लिए उसे किए गए किसी आवेदन पर यह आदेश कर सकेगा कि प्रतिवादी, वादी के भरण-पोषण और संभाल के लिए ऐसी कुल राशि या ऐसी मासिक अथवा कालिक राशि धन जो प्रतिवादी को अपनी आय और अन्य संपत्ति को, यदि कोई हो, वादी की आय और अन्य संपत्ति को पक्षकारों के आचारण और मामले की अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हो, वादी के जीवनकाल से अनधिक अवधि के लिए संदत्त करे और ऐसा कोई संदाय, यदि आवश्यक हो तो, प्रतिवादी को स्थावर या जंगम संपत्ति पर भार द्वारा प्रतिभूत किया जा सकेगा ।

(2) यदि न्यायालय का यह समाधन हो जाता है कि उसके उपधारा (1) के अधीन आदेश करने के पश्चात् किसी भी समय पक्षकारों में से किसी की भी परिस्थितियों में कोई तब्दीली हो गई है तो वह किसी पक्षकार की प्रेरणा पर ऐसे आदेश को ऐसी रीति से जो न्यायालय न्यायसंगत समझे, परिवर्तित, उपांतरित या विखंडित कर सकेगा ।

(3) यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि उस पक्षकार ने, जिसके पक्ष में इस धारा के अधीन आदेश किया गया है, पुन: विवाह कर लिया है, या यदि ऐसा पक्षकार पत्नी है तो वह सतीव्रता नहीं रही है या यदि ऐसा पक्षकार पति है तो उसने किसी स्त्री के साथ विवाह-बाह्य मैथुन किया है, तो वह दूसरे पक्षकार की प्रेरणा पर, ऐसे आदेश को ऐसी रीति से, जो न्यायालय न्यायसंगत समझे, परिवर्तित, उपांतरित या विखंडित कर सकेगा ।]

41. पत्नी या उसके न्यासी को निर्वाह-व्यय का संदाय—उन सभी मामलों में, जिनमें न्यायालय निर्वाह-व्यय के लिए कोई डिक्री या आदेश करे, वह यह निदेश दे सकेगा कि निर्वाह-व्यय या तो स्वयं पत्नी को या न्यायालय द्वारा अनुमोदित [4][या न्यायालय द्वारा नियुक्त किसी संरक्षक] या उसके किसी न्यासी को संदत्त किया जाए और ऐसी शर्तें या निबन्धन अधिरोपित कर सकेगा जो न्यायालय को समीचीन प्रतीत हों और यदि किसी कारण से न्यायालय को ऐसा करना समीचीन प्रतीत हो तो वह समय-समय पर नया न्यासी [3][या संरक्षक] नियुक्त कर सकेगा ।

42. संयुक्त सम्पत्ति का व्ययन—इस अधिनियम के अधीन किसी वाद में, विवाह के समय या उसके लगभग, उपहार में दी गई ऐसी सम्पत्ति की बाबत, जो पति और पत्नी, दोनों की संयुक्त सम्पत्ति हो, न्यायालय अन्तिम डिक्री में ऐसा उपबंध कर सकेगा जो वह न्यायसंगत और उचित समझे ।

[5][**43. वादों की सुनवाई बंद कमरे में होना और उन्हें मुद्रित या प्रकाशित न किया जाना**—(1) इस अधिनियम के अधीन फाइल किए गए प्रत्येक वाद का विचारण बंद कमरे में किया जाएगा और किसी व्यक्ति के लिए ऐसे किसी मामले के संबंध में किसी बात को मुद्रित या प्रकाशित करना विधिपूर्ण नहीं होगा, सिवाय न्यायालय के ऐसे किसी निर्णय को छोड़कर जो उस न्यायालय की पूर्ण अनुज्ञा से प्रकाशित या मुद्रित किया गया है ।

(2) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) में अंतर्विष्ट उपबंध के उल्लंघन में कोई बात मुद्रित या प्रकाशित करेगा तो वह जुर्माने से, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।]

44. विचारण की विधिमान्यता—धारा 19 और धारा 20 में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी पारसी विवाह न्यायालय में किसी विचारण के मामले में समस्त कार्यवाहियों में कम से कम [6][तीन] डेलीगेट हाजिर रहे हों, वहां विचारण के किसी भाग के दौरान अन्य डेलीगेटों की अनुपस्थिति के कारण, विचारण अविधिमान्य नहीं होगा ।

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 12 द्वारा (15-4-1988 से) धारा 38 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 12 द्वारा (15-4-1988 से) धारा 39 और धारा 40 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
[3] 2001 के अधिनियम सं० 49 की धारा 4 द्वारा अंत:स्थापित ।
[4] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 14 द्वारा (15-4-1988 से) अंत:स्थापित ।
[5] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 15 द्वारा (15-4-1988 से) धारा 43 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
[6] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 16 द्वारा (15-4-1988 से) "पांच" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

COURT BOOK

45. इस अधिनियम के अधीन वादों को सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबन्धों का लागू होना—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के उपबन्ध इस अधिनियम के अधीन संस्थित वादों की कार्यवाहियों को, जिनमें निष्पादन की कार्यवाहियों और डिक्रियों के पश्चात् के आदेश भी आते हैं, जहां तक वे लागू किए जा सकते हैं, लागू होंगे :

[1][परन्तु पीठासीन न्यायाधीश उस अधिनियम की सुसंगत धाराओं को डेलीगेटों को पढ़कर सुनाएगा और, यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझता है तो, उन्हें स्पष्ट करेगा :

परंतु यह और कि पीठासीन न्यायाधीश डेलीगेटों को जो पढ़कर सुनाएगा या स्पष्ट करेगा उसका एक शब्दश: अभिलेख तैयार किया जाएगा ।]

46. विधि और प्रक्रिया तथा तथ्य के प्रश्नों का अवधारण—इस अधिनियम के अधीन वादों में, विधि और प्रक्रिया के सभी प्रश्न पीठासीन न्यायाधीश द्वारा अवधारित किए जाएंगे, परन्तु तथ्य विषयक विनिश्चय उन डेलीगटों की बहुसंख्या के अनुसार होगा, जिनके समक्ष मामले का विचारण किया जाता है :

परन्तु जहां ऐसे डेलीगेट अपनी राय में बराबर बंटे हों, वहां तथ्य के संबंध में विनिश्चय, पीठासीन न्यायाधीश का होगा ।

47. उच्च न्यायालय को अपील—[2][(1)] उच्च न्यायालय को,—

(क) इस अधिनियम के अधीन स्थापित किसी न्यायालय के विनिश्चय के विरुद्ध अपील, चाहे वह प्रधान विवाह न्यायालय हो या जिला विवाह न्यायालय हो, इस आधार पर की जा सकेगी कि वह विनिश्चय किसी विधि के या विधि का बल रखने वाली प्रथा के प्रतिकूल है या इस आधार पर की जा सकेगी कि मामले की प्रक्रिया या अन्वेषण में ऐसी सारवान् गलती या त्रुटि है, जिससे कि गुणागुण पर मामले के विनिश्चय में गलती या त्रुटि उत्पन्न हो गई है, और किसी अन्य आधार पर अपील नहीं की जा सकेगी, और

(ख) किसी ऐसे न्यायालय द्वारा धारा 29 की उपधारा (3) के अधीन इजाजत देने के विरुद्ध अपील की जा सकेगी :

परन्तु ऐसी अपील उस विनिश्चय के सुनाए जाने के पश्चात् जिसके विरुद्ध वह की गई है, तीन कलैण्डर मास के भीतर संस्थित की जाएगी ।

[3][(2) उपधारा (1) में अधीन प्रत्येक अपील उच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा सुनी जाएगी ।]

48. पक्षकारों को पुनर्विवाह करने की स्वतन्त्रता—जब विवाह-विच्छेद या विवाह का बातिलकरण या विघटन करने वाली किसी डिक्री के विरुद्ध अपील करने के लिए परिसीमाकाल [4]*** समाप्त हो गया है और ऐसी डिक्री के विरुद्ध कोई भी अपील प्रस्तुत नहीं की गई है या जब कोई ऐसी अपील खारिज की गई है या किसी अपील के परिणामस्वरूप विवाह-विच्छेद मंजूर कर दिया गया है या विवाह बातिल या विघटित घोषित कर दिया गया है, तब, न कि उसके पहले, इसके पक्षकारों के लिए पुन:विवाह करना इस प्रकार विधिपूर्ण होगा [5]*** ।]

5—पक्षकारों की सन्तानें

49. संतान की अभिरक्षा—इस अधिनियम के अधीन किसी वाद में न्यायालय [6][अठारह वर्ष] की आयु से कम की ऐसी सन्तानों की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के सम्बन्ध में, जिनके माता-पिता का विवाह ऐसे वाद का विषय है, समय-समय पर ऐसे अन्तरिम आदेश पारित कर सकेगा और अंतिम डिक्री में ऐसे उपबन्ध कर सकेगा जैसे कि वह न्यायसंगत और उचित समझे और अन्तिम डिक्री के पश्चात् ऐसी सन्तानों की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के सम्बन्ध में इस प्रयोजन के लिए याचिका द्वारा आवेदन पर समय-समय पर ऐसे सभी आदेश दे सकेगा और उपबन्ध कर सकेगा, और उन्हें प्रतिसंहृत कर सकेगा, निलम्बित कर सकेगा या परिवर्तित कर सकेगा जो ऐसी अंतिम डिक्री द्वारा या यदि ऐसी डिक्री अभिप्राप्त करने के लिए वाद लंबित होता तो अंतरिम आदेशों द्वारा किए जाते :

[7][परन्तु वाद के दौरान ऐसी संतानों के भरण-पोषण और शिक्षा की बाबत आवेदन को यथासंभव, प्रत्यर्थी पर सूचना की तामील की तारीख से, साठ दिन के भीतर निपटाया जाएगा ।]

50. सन्तान के फायदे के लिए पत्नी की सम्पत्ति का व्यवस्थापन—किसी ऐसे मामले में जिसमें न्यायालय ने पत्नी के जारकर्म के लिए विवाह-विच्छेद या न्यायिक पृथक्करण के लिए डिक्री दी है, यदि न्यायालय की जानकारी में यह बात लाई जाती है कि पत्नी कब्जे या उत्तरभोग द्वारा किसी सम्पत्ति की हकदार है तो, न्यायालय ऐसे विवाह के कारण उत्पन्न सन्तानों के लिए या उनमें से किसी के

---

[1] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 17 द्वारा (15-4-1988 से) जोड़ा गया ।

[2] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 18 द्वारा (15-4-1988 से) धारा 47 को उसकी उपधारा (1) के रूप में पुन:संख्यांकित किया गया ।

[3] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 18 द्वारा (15-4-1988 से) अन्त:स्थापित ।

[4] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 19 द्वारा (15-4-1988 से) "एतद्द्वारा" शब्द का लोप किया गया ।

[5] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 19 द्वारा (15-4-1988 से) कतिपय शब्दों का लोप किया गया ।

[6] 1988 के अधिनियम सं० 5 की धारा 19 द्वारा (15-4-1988 से) "सोलह वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[7] 2001 के अधिनियम सं० 49 की धारा 5 द्वारा अंत:स्थापित ।

COURT BOOK

फायदे के लिए ऐसी सम्पत्ति के किसी भाग का, जो उसके आधे से अधिक नहीं होगा, ऐसा व्यवस्थापन किए जाने का आदेश कर सकेगा जो वह युक्तियुक्त समझे ।

6—प्रकीर्ण

51. उच्च न्यायालय का अधीक्षण—उच्च न्यायालय इस अधिनियम के अधीन गठित और उसकी अपीली अधिकारिता के अधीन आने वाले सभी न्यायालयों का उसी प्रकार अधीक्षण करेगा जैसे वह [1][संविधान के अनुच्छेद 227] के अधीन अन्य न्यायालयों पर करता है, और [2][उस अनुच्छेद] के सभी उपबन्ध ऐसे न्यायालयों को लागू होंगे ।

52. अधिनियम के उपबन्धों का लागू होना—(1) इस अधिनियम के उपबन्ध ऐसे सभी वादों को लागू होंगे, जिन्हें वे लागू हैं, चाहे आधारभूत परिस्थितियां इस अधिनियम के पारित होने के पूर्व या पश्चात् घटित हुई हों और चाहे निर्दिष्ट कोई डिक्री या आदेश इस अधिनियम के अधीन या इस अधिनियम के पारित होने के पूर्व प्रवृत्त विधि के अधीन पारित किया गया था, और जहां इस अधिनियम के प्रारम्भ के समय किसी न्यायालय में कार्यवाहियां लम्बित हैं, वहां न्यायालय अभिवचनों का ऐसा संशोधन अनुज्ञात करेगा जैसा इस अधिनियम के प्रवर्तन में आने के कारण आवश्यक हो ।

(2) कोई पारसी, जिसने [3][पारसी मैरेज एण्ड डाईवोर्स ऐक्ट, 1865 (1865 का 15) या इस अधिनियम के अधीन विवाह किया है ऐसे पारसी पुरुष या स्त्री द्वारा अपना धर्म या अधिवास परिवर्तित कर लिए जाने पर भी, जब तक उस पुरुष की पत्नी या उस स्त्री का पति जीवित है और जब तक ऐसे पारसी का ऐसी पत्नी या पति से विधिपूर्ण रीति से विवाह-विच्छेद नहीं किया गया है या ऐसा विवाह उक्त अधिनियमों में से किसी एक के अधीन किसी सक्षम न्यायालय की डिक्री के अधीन विधिपूर्ण रीति से अकृत और शून्य या विघटित घोषित नहीं किया गया है, इस अधिनियम के उपबन्धों द्वारा आबद्ध होगा ।

53. [**निरसन ।**]—निरसन तथा संशोधन अधिनियम, 1937 (1937 का 20) की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा निरसित ।

प्रथम अनुसूची

(धारा 3 देखिए)

रक्त संबंध और विवाह संबंध की प्रतिषिद्ध कोटियों की सारणी

कोई पुरुष निम्नलिखित में से किसी के साथ विवाह नहीं करेगा—

(1) पितामह की माता ।

(2) पितामही की माता ।

(3) मातामह की माता ।

(4) मातामही की माता ।

(5) पितामही ।

(6) पितामही की पत्नी ।

(7) मातामही ।

(8) मातामह की पत्नी ।

(9) माता या सौतेली माता ।

(10) पिता की बहिन या सौतेली बहन ।

(11) माता की बहिन या सौतेली बहन ।

(12) बहिन या सौतेली बहन ।

(13) भाई की पुत्री या सौतेले भाई की पुत्री या भाई या सौतेले भाई की कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(14) बहिन की पुत्री या सौतेली बहिन की पुत्री या बहन या सौतेली बहिन की कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(15) पुत्री या सौतेली पुत्री या दोनों में से किसी की कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(16) पुत्र की पुत्री या सौतेले पुत्र की पुत्री या पुत्र या सौतेले पुत्र की कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(17) पुत्र या सौतेले पुत्र की पत्नी या पुत्र या सौतेले पुत्र की किसी सीधा पारंपरिक वंशज की पत्नी ।

---

[1] विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा 'गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट की धारा 107' के स्थान प्रतिस्थापित ।

[2] 1957 के अधिनियम सं० 36 की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा "उस धारा" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] इस अधिनिमय द्वारा निरसित ।

COURT BOOK

(18) पुत्री के पुत्र की पत्नी या सौतेली पुत्री के पुत्र की पत्नी या पुत्री या सौतेली पुत्री के किसी सीधा पारंपरिक वंशज की पत्नी ।

(19) पुत्री के पति की माता ।

(20) पुत्र की पत्नी की माता ।

(21) पत्नी के पितामह की माता ।

(22) पत्नी की पितामही की माता ।

(23) पत्नी के मातामह की माता ।

(24) पत्नी की मातामही की माता ।

(25) पत्नी की पितामही ।

(26) पत्नी की मातामही ।

(27) पत्नी की माता या सौतेली माता ।

(28) पत्नी के पिता की बहिन ।

(29) पत्नी की माता की बहिन ।

(30) पिता की भाई की पत्नी ।

(31) माता के भाई की पत्नी ।

(32) भाई के पुत्र की पत्नी ।

(33) बहिन के पुत्र की पत्नी ।

कोई स्त्री निम्नलिखित में से किसी के साथ विवाह नहीं करेगी—

(1) पितामह का पिता ।

(2) पितामही का पिता ।

(3) मातामह का पिता ।

(4) मातामही का पिता ।

(5) पितामह ।

(6) पितामही का पति ।

(7) मातामह ।

(8) मातामही का पति ।

(9) पिता या सौतेला पिता ।

(10) पिता का भाई या सौतेला भाई ।

(11) माता का भाई या सौतेला भाई ।

(12) भाई या सौतेला भाई ।

(13) भाई का पुत्र या सौतेले भाई का पुत्र या भाई या सौतेले भाई का कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(14) बहिन का पुत्र या सौतेली बहिन का पुत्र या बहन या सौतेली बहिन का कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(15) पुत्र या सौतेला पुत्र या दोनों में से किसी का कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(16) पुत्री का पुत्र या सौतेली पुत्री का पुत्र या पुत्री या सौतेली पुत्री का कोई सीधा पारंपरिक वंशज ।

(17) पुत्री का पति या सौतेली पुत्री का पति या पुत्री या सौतेली पुत्री के किसी सीधा पारंपरिक वंशज का पति ।

(18) पुत्र की पुत्री का या सोतेले पुत्र की पुत्री का पति या पुत्र या सौतेले पुत्र के किसी सीधा पारंपरिक वंशज का पति ।

COURT BOOK
EMPOWERING LEGAL CLARITY

(19) पुत्री के पति का पिता।

(20) पुत्र की पत्नी का पिता।

(21) पति के पितामह का पिता।

(22) पति के पितामही का पिता।

(23) पति के मातामह का पिता।

(24) पति की मातामही का पिता।

(25) पति का पितामह।

(26) पति का मातामही।

(27) पति का पिता या सौतेला पिता।

(28) पति के पिता का भाई।

(29) पति की माता का भाई।

(30) पति के भाई का पुत्र या उसका कोई सीधा पारंपरिक वंशज।

(31) पति की बहन का पुत्र या उसका कोई सीधा पारंपरिक वंशज।

(32) भाई की पुत्री का पति।

(33) बहिन की पुत्री का पति।

टिप्पण : ऊपर दी गई सारणी में "भाई" और "बहिन" शब्द पूर्ण-रक्त तथा अर्द्ध-रक्त, दोनों का द्योतक है। सौतेली नातेदारी से विवाह द्वारा नातेदारी अभिप्रेत है।

द्वितीय अनुसूची

(धारा 6 देखिए)

विवाह का प्रमाणपत्र

....विवाह की तारीख तथा स्थान।

....पति तथा पत्नी के नाम।

....विवाह के समय की स्थिति।

....रैंक या वृत्ति।

....आयु।

....निवास।

....पिता या संरक्षक के नाम।

....रैंक या वृत्ति।

....विवाह कराने वाले पुरोहित के हस्ताक्षर।

....यदि विवाह के पक्षकार 21 वर्ष से कम आयु के हैं तो उनके पिता या संरक्षक के हस्ताक्षर।

....साक्षियों के हस्ताक्षर।